# अमृतलाल नागर की कहानी हाजी कुल्फीवाला का सामाजिक विश्लेषण

**ममता यादव**
सहायक आचार्य
भारतीय विद्या भवन बालिका महाविद्यालय, लखनऊ

***शोध–सार***

*अमृतलाल नागर जी द्वारा रचनाओं में उनका विषय वस्तु पर किया गया शोध उनकी रचनाओं को ख़ास बनाता है अपनी रचनाओं में उन्होंने अपने आस पास के समाज की घटनाओं को वास्तविकता के साथ कागज़ पर उतारने की कोशिश की है लखनऊ के जनजीवन और बोली का जितना शानदार चित्रण अमृतलाल नागर जी की रचनाओं में मिलता है उतना शायद कहीं नहीं। उनकी लिखी कहानियो मे से एक कहानी हाजी कुल्फीवाला का सामाजिक विश्लेषण निम्न शोध पत्र में दिया गया है। यह कहानी चौक के आस पास लखनऊ के एक बूढ़े आदमी हाजी कुल्फीवाला के संघर्ष और सामाजिक द्रष्टिकोण की है। इस कहानी का मुख्य किरदार अपना अच्छा आचरण और अनुभव प्रयोग करते हुए विकट परिस्थितियों में भी बेहतर कार्य करता है। इस कहानी में अमृतलाल नगर जी द्वारा कही गयी बात वर्तमान परिस्थितियो में भी सार्थक सिद्ध होती है और व्याहारिक तोर पर समाज के लिए एक मार्ग प्रशस्त करती है।*

***मुख्य शब्दः*** *निमिष, सर्टिफिकेट, तहजीब–याफ्ता, कुल्फियाँ, कल्लेदराज, मुश्तरी*

**प्रस्तावना**

अमृतलाल नागर जी की कहानियों मे जैसे एक पूरा वास्तविक चित्रण देखने और पढने को मिलता है। उनकी ज्यादातर कहानियो मे उन्होंने चौक के आस पास लखनऊ के नवाबी रंग, चौक क्षेत्र की गलियों का जीवन और समाज को जिस तरह से अनुभव किया है और लिखा है उनकी कहानियो मे स्पष्ट दिखाई देता है। शब्दों को पारंपरिक समन्वय और जिस शैली के साथ कहानी के पात्रो के लिए इस्तेमाल किया है वो उनके पात्रों को जीवंतता देते है। आम बोलचाल की भाषा शैली उनकी कहानियो की विशेषता रही है। जो उनको ऊंचे दर्जे के कथाकार बनाते है उनकी कहानियो मे उम्र की अलग अलग अवस्थाओ को पढने और समझने को मिलता है। अमृतलाल नागर जितने ऊंचे दर्जे के कथाकार–उपन्यासकार थे, उतने ही ऊंचे दर्जे के जिंदादिल व्यंग्यकार भी थे। इनका हास्य–व्यंग्य लेखन भी कोई कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। इनकी इसी जिंदादिली और विनोदी वृत्ति के कारण इनकी रचनाएं अत्यंत पठनीय और रोचनीय बन पड़ी हैं।

अमृतलाल नागर जी की कहानी हाजी कुल्फीवाला चौक नखास के इलाके के आस पास के माहोल और पात्रो को जीवंत करती है। कहानी के शीर्षक से ही कहानी के मुख्य पात्र का पता चलता है और कहानी हाजी कुल्फीवाला के इर्द–गिर्द ही घूमती है। अमृतलाल नागर जी ने अपनी रचनाओ का शीर्षक मे पात्रों के नाम के साथ साथ आम बोलचाल के शब्दों का इस्तेमाल भी किया है जिससे इनकी रचनाएं पाठको मे एक नयी उर्जा और जिज्ञासा भरती हैं जैसे– सेठ बांकेमल, कृपया दाएं चलिए, हम फिदाए लखनऊ, बाबू पुराण, चकल्लस, कोडी के तीन, दो आस्थाए, सिकंदर हार गया, हाजी कुल्फीवाला, क़यामत का दिन, रानी और संतान, मुल्लर की महतारी, गौने की तलब इत्यादि। अमृतलाल नागर जी की हर कहानी समाज की अच्छाई और बुराई दोनों को बया करती हुई कोई महत्वपूर्ण सन्देश देती नज़र आती है।

हाजी कुल्फीवाला कहानी, हाजी मियाँ बुलाकी कुल्फीवाले के इर्द गिर्द घुमती हुई, हिन्दुस्तान की आजादी के समय की पटकथा पर लिखी हुई है। आज के दौर में भी यह कहानी समाज के कुछ अंश को सटीकता व सजीवता से

दर्शाती है। इसमें पारिस्थितियो के बीच एक समन्वय देखने को भी मिलता है नागरजी की इस कहानी में, एक पिचासी–छियासी बरस के बूढ़े आदमी का उम्र के उस पड़ाव पर अपने बेटे और बेटी को खो देने के बाद दोबारा संघर्ष और उसकी सामाजिक सूज बूज का चित्रण हुआ है।

**सम्बंधित साहित्य का विश्लेषण**

कहानी की भूमिका से ही कहानी का सम्पूर्ण कथानक समझ में आ जाता है । कहानी 'हाजी कुल्फीवाला' के शुरुआत मे ही कुछ पंक्तिया लिखी हुई है जो पाठकों की उत्सुकता को और बढाती है।

जागता है खुदा और सोता है आलम।
कि रिश्ते में किस्सा है निंदिया का बालम।।
ये किस्सा है सादा नहीं है कमाल।।
न लफ्जों में जादू बयाँ में जमाल।।
सुनी कह रहा हूँ न देखा है हाल।।
फिर भी न शक के उठाएँ सवाल।।
कि किस्से पे लाजिम है सच का असर।।

छापे का किस्सागो अर्ज़ करता है की अमृतलाल नागर जी कहानी की शुरुआत चौक लखनऊ से करते हुए लिखते है– एक है चौक नखास का इलाका और एक हैं हाजी मियाँ बुलाकी कुल्फीवाले। पिचासी–छियासी बरस की उमर है, दोहरा थका बदन है। पट्टेदार बाल, गलमुच्छे और आदाब अर्ज करते हुए उनके हाथ उठाने के अंदाज में वह लखनऊ मिल जाता है जो आमतौर पर अब खुद लखनऊ को ही देखना नसीब नहीं होता। किसी जमाने में हाजी मियाँ बुलाकी की बरफ और निमिष खाने के लिए गोंडा, बहराइच, बलरामपुर, कानपुर और दूर–दूर से रईस शौकीन गर्मी–सर्दी के मौसमों में दो बार लखनऊ तशरीफ लाते थे। बुलाकी की बदौलत चार नाचने–गाने वालियों, उनके लगुए–भगुओं और चार किस्म के सौदागरों का भी भला हो जाता था। बुलाकी मियाँ ने हजारों रुपये पैदा किए। पक्का दो–मंजिला मकान बनवाया। दो बार हज कर आए। पहले लड़के और फिर लड़की की शादी धूमधाम से की। न लड़की रही न लड़का; पंद्रह–बीस बरसों के आटे–पाटे में हाजी साहब पिस गए। लड़की का गम लड़के के दम पर सह लिया। लड़का भी ऐसा होशियार था कि बाप का नाम दोबाला किया। सत्रह–अठारह साल हुए, एक दिन राह चलते हार्ट फेल हुआ और चटपट हो गया। अपने पैरों घर से गया था; पराए हाथों उठकर उसकी लाश आई।

शुरुवात मे ही वह कहानी की पूरी पृष्ठभूमि तैयार कर देते है जिससे कहानी पाठको मे मनोरंजन और जिज्ञासा दोनों का अनुभव कराते हुए आगे बढती है कहानी मे वह आगे लिखते है– साल डेढ़ साल तो गम में टूटे सिमटे बदहवास बैठे रहे, मगर फिर पोतों का मुँह देखकर हाजी बुलाकी मियाँ ने अपना जी कड़ा किया। सोचा कि घर से निकालकर खाते–खाते तो एक दिन 'कारूँ का खजाना' भी चुक जाता है, फिर मेरे बाद इन बच्चो का क्या होगा? इसलिए हाथ–पैर गो थके ही सही, मगर जब तक चलते हैं तब तक पुराने हुनर से इतने जनों का पेट क्यों न भरूँ – कुल्फियाँ धोने और दूध बगैरा औटाने–भरने के चक्कर में बूढ़ी का ध्यान बँटेगा, दुलहिन का वक्त कटेगा, बच्चो के पेट में बहाने से कुछ न कुछ मेवा भी पहुँचता रहेगा और मेरा भी बाहर निकलना हो जाएगा। अब और किया क्या जाए?

अमृतलाल नागर जी की इस कहानी मे जिस तरह से शब्दों का प्रयोग हुआ है वह इस कहानी के समयकाल, और सामाजिक माहौल को प्रस्तुत करने के लिए परिपूर्ण है ऐसे ही शब्दों के साथ कहानी आगे बढती है। इस तरह एक दिन बादाम, पिस्ता, चिरौंजी, इलायची, जाफरान, शक्कर, संतरे और अनारों का सौदा कर लाए; दूध, रबड़ी, मलाई लाए, कुल्फियाँ धोई; कढ़ाव चढ़ाया। उन्नीसवी सदी में उस्तादों की चिलमें भर–भर के सीखे हुए हुनर के हाथ रच–रचकर दिखलाए। फिर हाजी बुलाकी मियाँ की तजुर्बेकार बीवी उम्र–भर के सधे हाथों से डले में कुल्फियाँ सजाने बैठी। बरफ भरकर हाँडी हिलाई। तब तक हाजी

बुलाकी मियाँ ने पुराने वक्तो में रईसों–नवाबों और अंग्रेज हिंदुस्तानी हाकिमों से मिले सार्टिफिकेटों का रजिस्टर निकाला। यह चमड़े का रजिस्टर वजीरे ने मरने के कुछ ही दिनों पहले कानपुर से पिचहत्तर रुपये में बनवाया था। हर पुश्त पर दो सर्टिफिकेट चमड़े के फ्रेम में मढ़ दिए। उसमें न टूटने वाले कागजी काँच भी जड़े हैं। अब्बा को अपने ये सर्टिफिकेट बहुत प्यारे हैं, इसलिए वजीरे यह कीमती रजिस्टर बनवाकर लाया था। हाजी उस दिन फूले न समाए थे, आज उस दिन को यादकर रोए। फिर अपने को सँभाला, कहीं बूढ़ी न देख ले। उजला कुरता, चूड़ीदार पाजामा और टोपी पहनी। मजदूर को बुलवाया, डला उसके सिर पर लादा और करीब सत्रह–अठारह बरसों के बाद अल्लाह का नाम लेकर कुल्फियाँ बेचने निकले। इस बार बूढ़े–बूढ़ी दोनों एक–दूसरे की आँखों को आँसुओं के हमले से न बचा सके। परदे की ओट में दुलहिन भी रो पड़ी। उसकी सिसकी सुनकर हाजी बुलाकी तेजी से बाहर चले आए। गली से बाहर आकर नखास बाजार में पहली आवाज लगी, 'कुल्फी मलाई की बरफ!' गला भर–भर आया।

दूसरी आवाज में ही बुलाकी मियाँ ने अपने को सँभाल लिया। वह इनसान ही क्या जो मुसीबत न झेल सके। घंटे के हिसाब से एक इक्का तय किया और उम्र–भर के बरते हुए बाजार को छोड़कर हजरतगंज, जापलिंग, रोड और पंचबंगलियों की तरफ चले। हिन्दुस्तान को आजादी बस मिलने वाली ही थी। नया दौर शुरू हो चुका था। एक आला हाकिमे–जमाना के वालिद बुजुर्गवार का दिया हुआ सर्टिफिकेट भी उनके रजिस्टर में मौजूद था। उन्हीं की कोठी का नंबर पूछते–पूछते जा पहुँचे। इक्का कोठी से बाहर ही खड़ा करवाया और रजिस्टर लिए अंदर गए। अर्दली से पूछा तो मालूम हुआ कि साहब पीछे वाले बगीचे में फुरसत से बैठे हैं। अर्दली को दुआएँ दी और कहा कि जरी ये खत हुजूर की खिदमत में पेश कर दो; मेरे बुढ़ापे पे तरस खाओ। अर्दली को रजिस्टर खोलकर दिया और खत पर हाथ रखकर बतला भी दिया। हाकिमे–जमाना बाप की लिखावट बरसों बाद अचानक देखकर बहुत खुश हुए, रजिस्टर के दूसरे सर्टिफिकेट पढ़ने लगे, फिर बुलाकी मियाँ को बुलवा लिया।

हाजी बुलाकी मियाँ महज खालिस माल से ही नहीं, बल्कि अपनी बातों और अदब–कायदे से भी ग्राहकों को खुश करते हैं। हाकिमें–जमाना, उनकी बेगम साहबा और दोनों जवान बेटियों के हाथ में तश्तरियाँ पहुँची नहीं कि हाजी बुलाकी ले उड़े : "कुल्फी में हूजूर दूध औटाने और शकर मिलाने में ही सिफ्त होती है। कुल्फी की तारीफ तो तब है जब कि यहाँ खोली जाए और बनारसी बाग में जाकर खाई जाए। इतनी देर में अगर कुल्फी गल जाए तो फिर हुजूर वह शौकीनों के खाने के काबिल नहीं। और बात सरकार यहीं तक नहीं, कुल्फी जमाने के फेर में अगर इतनी बरफ डाल दी कि खानेवाले के दाँत गले और जबान ठिठुरी तो फिर हुजुर सिफ्त क्या रही! आजकल के कुल्फी वाले लखनऊ के पुराने हुनर को नहीं जानते। हमारे उस्ताद ने सिखाया था कि अव्वल तो ये समझो कि कुल्फी में तरावट किस चीज की है, बरफ की या दूध, मलाई, रबड़ी, फलों, मेवों की। यही तो पकड़ की बात है बेगम साहबा, अल्ला आप सबको जीता रक्खे। माल को हुजूर तरावट इतनी ही देनी चाहिए कि उस पर से मौसमे–गर्मी का असर हट जाए। अगर दाँत गले तो परखैया परखेगा क्या? पढ़ी–लिखी लड़कियों और हाकिमे–आला पर बातों का असर होने लगा।

बुलाकी मियाँ ने लड़कियों की ओर मुखातिब होकर सुनाया, ''आपके जन्नतनशीं दादाजान को खुश करना हर एक के बस की बात न थी, हुजूर मेरी बात के गवाह होंगे। आपके दादाजान एक बार छोटे लाट साहब के यहाँ खाना खाने गए थे। वहाँ मुर्ग–मुसल्लम की बड़ी तारीफ हो रही थी। कई और अंग्रेज हाकिम थे। शहर के कुछ रईस नवाब भी थे। सभी लाट साहब के बावर्ची के लाम बाँध चले। आपके दादाजान खामोश बैठे रहे। लाट साहब बोले कि नवाब

साहब आपने तारीफ नहीं की। आपके दादाजान ने फरमाया कि हुजूर, तारीफ के काबिल कोई चीज तो हो। फिर उन्होंने अपने यहाँ सबको दावत दी। साहबजादियों, मेरी बात के चस्मदीद गवाह हमारे सरकार यहाँ तशरीफ–फर्मा हैं। जहाँ तक मुझे ध्यान है, हुजूर उस वक्त कोई दस या ग्यारह साल के रहे होंगे।

इसके बाद हाकिमे–जमाना और उनका खानदान हाजी बुलाकी मियाँ का अजसरे नौ सरपरस्त हो गया। फिर कोई शानदार कोठी–बँगलेवाला हाजी बुलाकी की कुल्फियों से महरूम न रहा। हाजी बुलाकी की कुल्फी और निमिष का शुमार भी लखनऊ के कल्चर में हो गया। विदेशी मेहमानों को लखनऊ आने पर चिकन के कुरते, दुपलिया टोपी, रूमाल और साड़ियाँ, मिट्टी के खिलौने और मशहूर इत्रों के तोहफे तो दिए ही जाते थे, हाजी बुलाकी की कुल्फी या सर्दियों में निमिष भी खिलाई जाने लगी। अंग्रेजी के अखबारवालों ने उनकी तस्वीरें तक छापीं। साल–भर में हाजी साहब का कारबार चल निकला। जो पहले की आमदनी के मुकाबिले में अब चौथाई भी न होती थी, क्योकि इनाम–इकराम देनेवाले रईस अब नहीं रहे, पर जमाने को देखते हुए हाजी साहब की रोजी सध गई। मुनाफे के लालच में माल निखालिस न किया, इज्जत और नाम पर डटे रहे। धीरे–धीरे दो पोतों को हाकिमे–जमाना की बदौलत मुस्तकिल चपरासियों में भरती करवाया। मुहल्ले–पड़ोस और रिश्तेदारी के कई लड़कों को छोटे–मोटे काम दिलाए। बड़ी इज्जत बढ़ गई। खुदा का शुक्र है, बूढ़ी ज़िंदा है, बहू है, बड़े पोते की बहू है। अल्लाह के फजलो–करम से उसके आगे भी दो बच्चे हैं। छोटे पोते की शादी भी पारसाल कर दी, मगर वह लड़की बड़ी कल्लेदराज है। सुख–चैन के चाँद में बस यही एक गहन लग गया है, वरना हाजी बुलाकी अब अपना गम भूल चुके हैं।

एक दिन किसी वक्त की नामी नाचने वाली मुश्तरीबाई का आदमी उन्हें बुलाने आया। हाजी दोपहर के वक्त उसके यहाँ गए। उन्होंने मुश्तरी को बच्ची से जवान और बूढ़ी होते देखा था। उसका जमाना देखा था कि रईसों–नवाबों के पलक–पाँवड़ों पर चलती थी। अब भी पुरानी लाखों की माया है मगर जमाना अब तवायफों का नहीं रहा। लड़कियों को बी.ए., एम.ए. पास कराया है, मगर अब गाड़ी आगे नहीं चलती। दरअस्ल मुश्तरी चाहती है कि दोनों की कहीं शादियाँ कर दे। यही नामुमकिन लगता है। हारकर दोनों को अदब–तहजीब सिखाई और थोड़ी–बहुत नाच और गाने की तालीम भी दिलवा दी है। कचोट लड़कियों के जी में भी है, मुश्तरी के मन में भी। आजकल सहारनपुर का एक रईसजादा दोनों लड़कियों का नया–नया दोस्त हुआ है। उसे शादी करने से एतराज नहीं, क्योकि उसकी माँ एक योरोपियन नर्स थी, जिसे उसके वालिद ने मुसलमान बनाकर अपनी कानूनी बीवी बनाया था। यह लड़का जब लखनऊ आता है तो फलाँ–फलाँ अफसर के घर मेहमान होता है। उनके यहाँ हाजी की निमिष खा चुका है, हाजी को जानता है। मुश्तरी हाजी बुलाकी की बातों के कमाल को जानती है। बाप की तरह उनके पैर पकड़कर कहा, ''उस लड़के को अपने शीशे में उतार लें हाजी साहब तो बड़ा सबाब होगा।

मैं जानती हूँ, आयंदा जमाने में ये जिंदगी इन लड़कियों से न सधेगी। अब इस पेशे में इज्जत नहीं रही। एक से पार पाऊँ तो दूसरी के हाथ पीले करने का रास्ता खुले।'' हाजी बुलाकी मान गए। दूसरे दिन शाम की मुश्तरी के यहाँ जा पहुँचे। बड़ी आवभगत हुई। सहारनपुरी रईसजादा वहाँ मौजूद था, दोनों लड़कियाँ तो थीं ही। हाजी ने गले में हाथ डालते हुए कहा, ''छोटे सरकार, खाना–पहनना और इश्क करना यों तो परिंदे–दरिंदे तक जानते हैं, मगर इनमें तमीज रखने और हजार पर्तें छानकर इनकी खूबी और अस्लियत पहचानने की कूवत अल्लाह ताला ने सिरिफ इनसान को ही अता फरमाई है। वो भी हर एक को नसीब नहीं। आपको अपने लड़कपन का हाल सुनाता हूँ। कोई सोलह–सत्रह बरस की

उमर होगी मेरी। उस्ताद के साथ जाया करता था। एक बहुत बड़े ताल्लुकेदार थे। लंबा–चौड़ा डील–डौल, गोरा सुर्खाबी बदन और उनकी बड़ी–बड़ी आँखें हसीन नाजनियों के लिए चुंबक थीं। आला ईरानी खानदान के, पुश्त–दर–पुश्त से पोतड़ों के रईस थे। मगर आम रईसों की तरह भोले–भाले न थे। उनके दो आँखें ऊपर थीं तो चार भीतर थीं। सबका राज लेकर किसी को अपना राज न देते थे। अपने जमाने के पक्के खिलाड़ी थे। सरकार, हजारों ने घेरा उन्हें, सैकड़ों ने रिझाया, जाल–कंपे डाले, मगर जिस तवायफ का मैं जिकर कर रहा हूँ वह अपने जमाने की नामी और हसीन थी। दिल में तमन्ना रखकर भी उसने कभी मुँह से कुछ न कहा। नवाब साहब उसकी ख़िदमतों को समझते रहे। जब खूब परख लिया तो उसे निहाल भी कर दिया। बाकी सब मुँह देखते ही रह गईं। फिर ऐसा भी वक्त आया कि नवाब साहब अपने चचा से मुकदमा लड़कर अपनी कुल एस्टेट हाई कोरट में हार गए। तब उस तवायफ ने कहा कि जानेमन, तुम हो मेरे, ये जेवर, दौलत और जायदाद मेरी नहीं है। इससे लंदनवाली अदालत तक मुकदमा लड़ो और सुर्खरूई हासिल करो। यही हुआ भी। नवाब साहब फिर मालामाल हो गए। बाद में नवाब साहब ने उस तवायफ से पूछा कि तुमने मुझमें ऐसा क्या देख लिया, जो औरों की नजर में न पड़ा। तवायफ बोली, 'मैंने देखा कि तुम उतावले नहीं, बल्कि पारखी हो और इनसाफ–पसंद हो। बस इसके सिवा फिर कुछ देखने को नहीं रहा। इस पर नवाब साहब ने उससे कहा, 'सैलाबे–इश्क अब अपनी हद पर है। अब मैं तुम्हें अपनी नौकर तवायफ की हैसियत से नहीं देख पाता। तुम मेरी मलिका हो।' बाकायदा हुजूर निकाह पढ़वाकर उसे अपने महलों में ले गए। तो इश्क इसे कहते हैं। हर चीज हुजूर समझदारी माँगती है। अब कुल्फियों को ही ले लीजिए – एक–एक ठंडा रेशा मुँह की गर्मी पाते ही पहले तो खिले और फिर धीरे–धीरे घुलता जाए। ज्यो–ज्यो घुले त्यों–त्यों मिठास बढ़ती जाए। जो खुशबू या जो मसाले डाले हों, वे अपनी जगह पर बोलें। ...यही मजा इश्क का भी है। सरकार का रुतबा आला है, मगर उम्र में हुजूर मेरे बच्चो के बच्चे के बराबर हैं। मेरी बातें आजमा देखिएगा।

हुजूर पर हाजी की बातों का सुरूर गँठने लगा। हाजी बुलाकी कुल्फियाँ खिलाते चले। लड़कियों और मुश्तरी की तारीफ करते चले, ''लड़कियाँ रतन हैं, मगर खुदा के इनसाफ से जिस पेशे में जन्म लिया है, उसमें बेचारियों को बेकुसूर घुटना होगा। कहाँ तो ये पढ़ी–लिखी तहजीब–याफ्ता लड़कियाँ, और कहाँ आज के जमाने का दोजख...। ''हुजूर, यह मुश्तरी बड़ी नेक लड़की है। इसने अपना जमाना देखा है। मगर मैं इसके मुँह पर कहता हूँ कि अभी तो लड़कियों का मुँह देखकर इस फिराक में हैं कि इनकी शादियाँ हो जाएँ। मगर खुदा मेरी इन बच्चियों को हर खतरे से बचाए, महज बात के तौर पर ही कह रहा हूँ कि बाद में हारकर यही मुश्तरी लड़कियों से कहेगी कि पेशा करो, यारों को ठगो और मेरे कहे मुताबिक तुम लोग नहीं करोगी तो घर से निकलो।

अरे हुजूर, झूठ नहीं कहता, अपनी लड़कियों के हक में इन नायकाओं से बढ़ कर कोई बुरा नहीं होता। रुपयों की लूट के पीछे दीवानी ये और कुछ भी नहीं सोचतीं। आपको एक किस्सा सुनाता हूँ गरीब–परवर। एक नौजवान रईस थे। एक तवायफ से दिल मिल गया। उसे निहाल कर दिया। मगर नायका का पेट इतने से ही न भरा। एक और बूढ़े भोंदू रईस को भी फँसा लिया। लड़की लाख कहे कि अम्मा मुझसे बेवफाई न कराओ मगर अम्मा झिड़क–झिड़क दें। कहें कि ऐसा सदा से होता आया है। खैर हुजूर होते, करते एक दिन नौजवान रईस को भी पता चल गया। वह चार गुंडों को लेकर उसके कोठे पर चढ़ आया। तवायफ की नाक काटी, बूढ़े की तोंद में करौली घुपी। बड़ा बावेला, तोबा–तिल्ला मचा। खैर, किस्सा खत्म हुआ मगर बेचारी लड़की नाक कटने के बाद दीनो–दुनिया, किसी अरथ की न

रही। बतलाइए, भला उसका क्या कुसूर था, जो ये सजा पाई। यही न कि तवायफ के घर पैदा हुई थी; इसलिए अपने आशिक से शादी न कर सकी और अपनी नायका – अम्मा के बस में उसे रहना पड़ा। मैं ऐसी–ऐसी सैकड़ों मिसालें दे सकता हूँ। इस बच्ची की सूरत देखकर तरस आता है। अब तो सरकार भी यह पेशा खत्म कर रही है। खुदा इन पर रहम करें।

बातों का सिलसिला बढ़ाते रहे और दो–तीन रोज में ही लड़का राजी हो गया। मुश्तरी अब हाजी बुलाकी के पाँव पकड़ती है, कहती है, दूसरी की शादी भी करवा दो, तब घर बैठकर खुदा का नाम लेना। लेकिन अब एक मुश्तरी की लड़कियाँ ही नहीं, कई और भी हाजी साहब से नई जिंदगी माँगती हैं। हाजी दिल ही दिल में परेशान रहते हैं कि सबको कहाँ पार लगाएँ।

हाजी कुल्फीवाला कहानी को सजीवता देने के लिए अमृतलाल नगर जी ने साधारण बोल चाल की भाषा के साथ साथ पात्रोनुकूल उर्दू के शब्दों का सटीकता से प्रयोग किया है। परदे की ओट, गलमुच्छे, सहारनपुरी रईसजादा, तहजीब–याफ्ता, पोतड़ों के रईस, आला हाकिमे–जमाना, सैलाबे–इश्क, हसीन नाजनियों, गरीब–परवर, रुतबा आला, सिरिफ इनसान, कचोट, मुश्तरी, योरोपियन नर्स, लगुए–भगुओं आदि शब्दों की प्रासंगिता उनकी कहानी को आगे बढ़ने के साथ साथ कहानी के मर्म और व्यंग को सम्पूर्णता के साथ अभिव्यक्त करते है।

आज के दौर में भी हाजी कुल्फीवाला जैसे असल किरदार हमे अपने जीवन में मिल जाते है। समाज में उनके लिए दोबारा खड़ा होना एक कठिन चुनोती होती है। शरीर जवाब देने लगता है और दिमाग की याददाश्त भी ठीक नही रहती लेकिन उम्र के उस पड़ाव पर उतना ही अनुभव भी होता है। इस कहानी में उसी अनुभव को बड़ी सटीकता से कहानी के मुख्य पात्र ने उपयोग किया है। यही अनुभव समाज में लोगो को जो दोबारा शुरुवात करने का साहस देता है। अपनी बीवी, बहु और पोतो के लिए दोबारा कुल्फियाँ बनाने का निर्णय लेते हुए वो सोचते है की कुल्फिया धोने और दूध बगैरा औटाने–भरने के चक्कर में बूढ़ी का ध्यान बँटेगा, दुलहिन का वक्त कटेगा, बच्चो के पेट में बहाने से कुछ न कुछ–मेवा भी पहुँचता रहेगा और मेरा भी बाहर निकलना हो जाएगा। अपना सिखा हुआ हुनर हमेशा ही काम आता है हाजी कुल्फीवाला ने भी दोबारा शुरुवात अपने पुराने हुनर कुल्फी और निमिष बनाने से की।

कहानी का वातावरण सजीव और मार्मिक है हिन्दूस्तान की आज़ादी के समय की लिखी हुई यह कहानी उस समय के कल्चर को बहुत सटीकता से दर्शाती है आज भी समाज में ऐसे व्यक्ति मिल जाते है जो अपने संघर्ष के साथ साथ दुसरे के जीवन की मुश्किलों को कम करने में लगे हुए है मुश्तरी की लडकियों की शादी की बात सहारनपुरी रईसजादा से करना हाजी कुल्फीवाला की नेक नियत और उसके पारिस्थितिक अनुभव को दर्शाता है समाज मे मुश्तरी की लडकियों की अच्छी पढाई के बावजूद शादी मे मुश्किल समाज को भी आयना दिखाता है।

कहानी के मुख्य किरदार हाजी कुल्फीवाला के पास बहुत अनुभव और किस्से कहानिया है उसी का इस्तेमाल कर वह सहारनपुरी रईसजादा को शादी के लिए तैयार करता है। जिस अदब, पकड़ और किस्से कहानियों के साथ वह अपनी बातें रखता है सहारनपुरी रईसजादा शादी के लिए तैयार हो जाता है। समाज में हाजी कुल्फीवाला जैसे अनुभवी किरदार कम ही मिलते है लेकिन उनका अनुभव और बाते इतनी प्रभावशाली होती है की कोई दूसरा व्यक्ति उनकी बातो से प्रभावित हुए बिना नही रह पाता।

**संदर्भ** नागर, अमृतलाल (2008). एक दिल हज़ार अफ़साने, प्रकाशक–राजपाल एंड संस